रक्त समूह की कहानी

नवनीत कुमार गुप्ता

मनुष्यों की शारीरिक बनावट लगभग एक जैसी ही होती है; लगभग सभी की दो आंखें, दो कान, एक नाक, मुंह, दो-दो हाथ-पैर आदि होते हैं। शरीर के अंगों के साथ ही उनके उपयोग भी एक जैसे ही होते हैं। लेकिन फिर भी एक-सी स्थिति में अलग-अलग मनुष्य के शरीर की प्रतिक्रिया क्यों अलग-अलग होती है, इस बात ने कई वैज्ञानिकों का ध्यान अपनी तरफ आकर्षित किया। ऐसे कुछ कारकों में रक्त भी एक कारक है। रक्त को समझने में वैज्ञानिकों को काफी समय लगा।

रक्त हमारे शरीर का आधार है। यह ऐसा तरल है जो ऑक्सीजन और पोषक तत्वों को शरीर की करोड़ों कोशिकाओं तक पहुंचाता है और इन कोशिकाओं से अनुपयोगी तत्वों जैसे कार्बन डाईऑक्साइड, यूरिया और लैक्टिक एसिड आदि को शरीर से बाहर निकालने में मदद करता है। इसके अलावा यह शरीर की प्रतिरोध क्षमता के विकास में सहायक होता है। शरीर की अम्लीयता नियमित रखने के अलावा रक्त शरीर के तापमान का नियंत्रण भी करता है।

रक्त की विभिन्न विशेषताओं का परिचय सबसे पहले रोगविज्ञानी कार्ल लैंडश्टाइनर (1868-1943) ने कराया। लैंडश्टाइनर ने अपने कैरियर के आरंभ में बीमारी और संक्रमण पर शोध किया। उनका अधिकांश समय रक्त और उसके विभिन्न घटकों के अध्ययन में गुज़रा।

सदियों पहले समाज में यह धारणा थी कि संसार में दो रक्त समूह हैं: एक अच्छे व्यक्तियों में और दूसरा बुरे व्यक्तियों में पाया जाता है। समय के साथ यह विचार बदला। लैंडश्टाइनर के समय यह धारणा प्रचलित थी कि सभी मनुष्यों का रक्त एक-सा होता है। लेकिन उस समय

	ग्रुप ए	ग्रुप बी	ग्रुप एबी	ग्रुप ओ
लाल रक्त कोशिका का प्रकार	ए	बी	एबी	ओ
प्लाज़्मा में एंटीबॉडी	एंटी-ए	एंटी-बी	कोई नहीं	एंटी-ए व एंटी बी
लाल रक्त कोशिका में एंटीजन	एंटीजन ए	एंटीजन बी	एंटीजन ए व बी	कोई एंटीजन नहीं

तक रक्त का ट्रांसफ्यूज़न (रक्ताधान) यानी एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में रक्त स्थानांतरित करने का काम आम नहीं था। यह संयोग ही होता था कि दानदाता का रक्त ग्रहण करने वाले के रक्त से मेल खा जाए। इसके अलावा रक्ताधान की तकनीक भी उन्नत नहीं थी इसलिए रक्त पाने वाले को इससे उतना लाभ नहीं होता था जितना होना चाहिए। रक्ताधान के कई मामलों में रक्त की कोशिकाओं के थक्के बन जाते थे और रक्त बहना बंद हो जाता था। थक्के बनने के कारण अक्सर व्यक्ति को आघात और पीलिया हो जाता था और उसकी मौत भी हो जाती थी। ऐसा हीमग्लूटिनेशन की वजह से होता था।

1901 में लैंडश्टाइनर ने पता लगाया कि ऐसा रक्त के रक्त सीरम के सम्पर्क में आने की वजह से होता है। उन्होंने नतीजा निकाला कि अलग-अलग लोगों के रक्त की बनावट अलग-अलग थी और इसी कारण से रक्तदाता की कोशिकाओं और रक्तग्राही की कोशिकाओं में समानता और असमानता उत्पन्न होती है।

अपने इस सिद्धांत की पुष्टि के लिए उन्होंने वियना युनिवर्सिटी हॉस्पिटल में कई दर्जन मरीज़ों के रक्त के नमूने लिए। अपनी प्रयोगशाला में उन्होंने रक्त की लाल कोशिकाओं को हर नमूने के रक्त सीरम से अलग किया। ऐसे सैकड़ों नमूनों की जांच और रक्त की लाल कोशिकाओं के परीक्षण के बाद उन्होंने पाया कि कुछ मामलों में रक्तदाता का रक्त कुछ सीरम नमूनों के साथ मिलाने पर थक्कों में बदल जाता था जबकि कुछ नमूनों के साथ ऐसी कोई प्रतिक्रिया नहीं होती थी।

पूरे एक साल तक परीक्षण और रक्त की पेचीदा संरचना का अध्ययन करने के बाद उन्होंने रक्त समूहों पर अपने विचार प्रस्तुत किए। लैंडश्टाइनर यह समझाने में कामयाब रहे कि इंसानी रक्त प्रमुख रूप से तीन तरह का होता है। ये प्रकार लाल रक्त कोशिकाओं की प्लाज़्मा झिल्ली से जुड़े एंटीजन से तय होते हैं। इस सिद्धांत का प्रयोग करके लैंडश्टाइनर ने मानव के रक्त को तीन समूहों में बांटाः ए, बी और सी। बाद में सी को ग्रुप ओ नाम दिया गया। एक साल बाद उनके दो साथियों - अल्फ्रेड फॉन डिकास्टेलो और एड्रियानो स्टरली ने और ज़्यादा लोगों की जांच की और एक चौथे ब्लड ग्रुप का भी पता लगाया और इसे 'एबी' ग्रुप नाम दिया गया।

दरअसल रक्त का वर्गीकरण लाल रक्त कोशिकाओं की सतह पर वंशानुगत एंटीजेनिक सामग्री की मौजूदगी या गैर-मौजूदगी के आधार पर किया जाता है। ये एंटीजन प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, ग्लाइकोप्रोटीन या ग्लाइकोलिपिड्स के रूप में हो सकते हैं। इनमें से कुछ एंटीजन विभिन्न ऊतकों की अलग-अलग तरह की कोशिकाओं की सतह पर मौजूद होते हैं। इंटरनेशनल सोसायटी फॉर ब्लड ट्रांसफ्यूज़न के मुताबिक इंसानी रक्त को तीस अलग-अलग तरह से समूहों में बांटा जा सकता है। किसी सम्पूर्ण रक्त समूह विवरण में लाल रक्त कोशिकाओं की सतह पर मौजूद सभी 30 तत्वों का वर्णन होता है।

रक्त के प्रकारों की खोज एक क्रांतिकारी कदम था। लेकिन उस दौर का वैज्ञानिक समुदाय इस खोज को स्वीकारने और इसका प्रयोग करने को लेकर आशंकित था। 1907 में यानी लैंडश्टाइनर की खोज को सार्वजनिक किए जाने के चार साल बाद न्यूयॉर्क के सेनाई हॉस्पिटल में डॉक्टर रयूबिन ओटनबर्ग ने ब्लड टाइपिंग का इस्तेमाल करके पहले आधुनिक रक्ताधान को अंजाम दिया। 1915 तक लैंडश्टाइनर के ब्लड टाइपिंग सिद्धांत को पूरी दुनिया में काफी हद तक स्वीकारा जाने लगा।

लेकिन ब्लड टाइपिंग का इस्तेमाल करके बड़े स्तर पर रक्ताधान सबसे पहले प्रथम विश्व युद्ध के दौरान किया गया। हृदय, फेफड़ों और शरीर के अन्य महत्वपूर्ण अंगों की सर्जरी पहले रक्ताधान की कमी के कारण असंभव-सी मानी जाती थी लेकिन अब ये काम आसान हो गया। ब्लड टाइपिंग आधारित रक्ताधान की बदौलत बहुत-सी ज़िन्दगियां बचाई जा सकीं।

लेकिन ब्लड टाइपिंग की यह अवधारणा अब भी अधूरी थी। लैंडश्टाइनर अब भी इंसान के रक्त के अध्ययन में जुटे थे। लैंडश्टाइनर ने देखा कि बहुत थोड़े मामलों में रक्त दाता और रक्तग्राही के ब्लड ग्रुप का पूरी तरह मिलान करने के बावजूद रक्त पाने वाले की रक्त

कोशिकाएं नए रक्त को स्वीकारने से इंकार कर देती थी जिससे खतरनाक और कभी-कभी घातक परिणाम हो जाते थे। इस प्रकार लैंडश्टाइनर और उनके सहयोगी डॉक्टर एलेक्ज़ेंडर वाइनर रक्त के एक और महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व से परिचित हुए। इससे इंसान के रक्त में आरएच फैक्टर की खोज हुई। इसे आरएच फैक्टर इसलिए कहा गया क्योंकि इसे पहले रीसस बंदर में खोजा गया था।

आरएच फैक्टर रक्त की लाल कोशिकाओं की सतह पर उपस्थित होता है। लगभग 85 प्रतिशत लोगों की लाल रक्त कोशिकाओं की सतह पर आरएच फैक्टर होता है और इन्हें आरएच पॉज़िटिव कहा जाता है। बाकी लोग आरएच निगेटिव होते हैं। लैंडश्टाइनर और वाइनर ने अंदाज़ा लगाया कि अगर आरएच निगेटिव वाले लोग आरएच पॉज़िटिव रक्त का एक से ज़्यादा रक्ताधान पाते हैं तो उनके रक्त में एंटी फैक्टर विकसित हो जाते हैं। इसलिए यह साबित हो गया कि सफल रक्ताधान के लिए महत्वपूर्ण है कि रक्त की किस्म के साथ-साथ आरएच फैक्टर भी मेल खाए। इस अध्ययन से एक और कमाल की खोज हुई। आरएच फैक्टर का पता चलने से नवजात बच्चों की एरिथ्रोब्लास्टोसिस फैटालिस या हिमोलिटिक बीमारी की वजह पता चली। ऐसा तब होता है जब मां और भ्रूण के रक्त की किस्में आपस में नहीं मिलती हैं और इसके नतीजे में मां की एंटीबॉडीज़ भ्रूण को घायल कर देती हैं। इस जानकारी के साथ ही अब प्रसव से पहले के चरण में इन पेचीदगियों का पता लगाना और उनका इलाज करना संभव हो गया है।

ब्लड टाइपिंग और आरएच फैक्टर की खोज के कुछ अप्रत्याशित उपयोग भी निकले हैं। 1902 में लैंडश्टाइनर ने वियना इंस्टीट्यूट ऑफ फॉरेंसिक मेडिसिन के मैक्स रिक्टर के साथ मिलकर एक व्याख्यान दिया था जिसमें उन्होंने अपराधों को हल करने में मदद के लिए रक्त के सूखे हुए धब्बों की टाइपिंग की एक नई विधि के बारे में बताया था। ब्लड टाइपिंग से मेडिको-लीगल मामलों में एक नया अध्याय खुला है और इन मामलों को सुलझाने में काफी मदद मिल रही है।

लैंडश्टाइनर ब्लड टाइपिंग और आरएच फैक्टर के बारे में अपनी खोजों को और पुष्ट तो बना रहे थे लेकिन उन्हें ये पता नहीं चल पाया कि ब्लड ग्रुप पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ते हैं। 1910 में फॉन डंजर्न और हर्शफेल्ड ने रक्त समूहों के वंशानुक्रमण की पहली अवधारणा प्रस्तुत की।

जिस व्यक्ति की लाल रक्त कोशिकाओं की सतह पर 'ए' किस्म का एंटीजेन होता है उसका रक्त ए प्रकार का होता है। जिसके रक्त की लाल कोशिकाओं की सतह पर 'बी' किस्म का एंटीजेन होता है उसका रक्त बी प्रकार का होता है। जिस व्यक्ति का रक्त एबी किस्म का होता है, उसके रक्त में दोनों एंटीजन होते हैं और जिस व्यक्ति का रक्त 'ओ' ग्रुप का होता है उसकी लाल रक्त कोशिकाओं की सतह पर कोई एंटीजन नहीं होता। प्लाज़्मा में इनके विपरीत एंटीबॉडीज़ पाई जाती हैं। लाल रक्त कोशिकाओं की सतह पर एंटीजन के साथ इन एंटीबॉडीज़ का मिश्रण नहीं होना चाहिए वरना थक्का बनने लगता है।

तो इस प्रकार ऑस्ट्रियाई मूल के कार्ल लैंडश्टाइनर के अनुसंधान की बदौलत मानव रक्त के व्यवहार से जुड़ी एक पहेली को सुलझाया गया। अपने काम से औपचारिक रूप से सेवानिवृत्त होने के काफी समय बाद तक भी वे सूक्ष्मदर्शी से शोध करके उन तमाम चीज़ों को नोट करते रहते थे जो अध्ययन के दौरान उन्हें पता चलती थी। 1943 में लैंडश्टाइनर की मृत्यु दिल का गम्भीर दौरा पड़ने से उस स्थान पर हो गई जहां उन्होंने अपना लगभग पूरा जीवन ही गुज़ारा था - यानी उनकी प्रयोगशाला में। लैंडश्टाइनर ने जो भी खोज की, उसमें वो अग्रणी थे। इसके बावजूद वे प्रचार-प्रसार और भाषण देने से बचते रहते थे। वे बहुत प्रतिभाशाली व्यक्ति थे और उनके काम को उनके जीवन काल के दौरान पूरी दुनिया में प्रसिद्धि और मान्यता मिली। 1930 में उन्हें शरीरक्रिया विज्ञान/चिकित्सा के लिए नोबेल सम्मान दिया गया था।

(स्रोत फीचर्स)